INTERNATIONAL JOURNAL OF HISTORY

E-ISSN: 2706-9117
P-ISSN: 2706-9109
www.historyjournal.net
IJH 2023; 5(1): 185-189
Received: 02-04-2023
Accepted: 06-05-2023

डॉ. सुदेश
सहायक प्रवक्ता-इतिहास,
महिला महाविद्यालय झोझू कलां, चरखी दादरी,
हरियाणा, भारत

Corresponding Author:
डॉ. सुदेश
सहायक प्रवक्ता-इतिहास,
महिला महाविद्यालय झोझू कलां, चरखी दादरी,
हरियाणा, भारत

भारतीय संत साहित्य की सगुण भक्ति धारा में मीरांबाई का योगदान-वर्तमान में प्रासंगिकता

डॉ. सुदेश

DOI: https://doi.org/10.22271/27069109.2023.v5.i1c.212

सारांश
सगुण भक्ति धारा में कृष्ण भक्तों में मीराबाई का स्थान श्रेष्ठ माना जाता है। मीरांबाई श्री कृष्ण जी को ईश्वर तुल्य ही नहीं बल्कि अपने पति के स्वरुप में भी वरण चुकी थी। साहित्य के अनुसार बाल्यवस्था से ही उन्होंने कृष्ण जी को वरण कर लिया था। तत्पश्चात मीरा ने संपूर्ण जीवन अन्य किसी के बारे में भी विचार नहीं किया। शादी के बाद भी उन्होंने अपने पति के बारे में न सोचकर कृष्ण भक्ति पर ही अपना जीवन न्यौछावर कर दिया।

मीराबाई के अनेक लोकप्रिय पदों व उनकी लोकप्रिय रचनाओं में इसका वर्णन देख सकते हैं, हालांकि इस प्रकार की काव्य रचना करना उनका उद्देश्य नहीं रहा लेकिन उनके द्वारा अपने आराध्य के प्रति निकले शब्द ही भजन के स्वरुप में ढलते चले गए। तत्पश्चात यही भजन लोक मानस के जुबान के जरिए इतने प्रचलित हुए की वर्तमान में भी कृष्ण के विभिन्न स्वरूपों को पूजनीय मानकर उनके लिए शब्द-भजन कीर्तन का एक अथाह सागर हम गाहे-बगाहे हे सुन ही लेते हैं। चाहे वह खाटू वाले श्याम, वृंदावन, मथुरा, गोकुल के कृष्ण भक्ति हो, चाहे वह कुरुक्षेत्र में रचित भगवदगीता के सृजनहार हो या फिर महाभारत युद्ध के निर्णायक सूत्रधार हो। हम उनको प्राचीन काल में ही नहीं अपितु वर्तमान में भी उतना ही शाश्वत पाते हैं।

अत: मीरा की कृष्ण भक्ति के तहत हम भारतीय साहित्य की काव्यधारा में सगुण भक्ति की विचारधारा को सहर्ष स्वीकार करते हुए नवीन ही नहीं अपितु हर काल में इसका अस्तित्व स्वीकार कर सकते हैं।

कुटशब्द: भारतीय साहित्य, सगुण भक्ति, मीराबाई, कृष्ण, श्रीमद्भगवद्गीता, वर्तमान, योगदान आदि

प्रस्तावना

‘मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा ने कोई,
जाके सिर मोर मुकुट मेरो पति सोई।

प्रस्तुत पंक्तियां किसी परिचय की मोहताज नहीं। कृष्ण भक्ति कवियित्री मीरा के द्वारा कही गई ये पंक्तियां भारतीय साहित्य में सगुण काव्यधारा की मुख्य उदाहरण है।

जन्म एवं बाल्यकाल: मीरा के जन्म के बारे में विभिन्न स्रोतों के माध्यम से लगभग अलग-अलग के जानकारी मिलती है। सं• सुदर्शन चोपड़ा की पुस्तक 'मीरा' के अनुसार मीरा जन्म ईस्वी सन् 1512 में (संवत 1573 विक्रम) मेड़तिया राठौर वंश में हुआ।1 जबकि सं• नीलोत्पल की प्रसिद्ध पुस्तक 'मीरा पदावली' में मीरा का जन्म संवत 1555 वि• में हुआ। कुछ अन्य स्रोतों से मीराबाई का जन्म मेड़ता महाराज के छोटे भाई रतन सिंह के घर 1498 ई• के लगभग हुआ। मीरा अपने माता-पिता के एकमात्र संतान थी। मीरा के नामकरण के संबंध में कहा जाता है कि मीरा के पिता रतन सिंह और माता वीर कुंवरि की पहली पुत्र संतान विवाह के कुछ वर्ष बाद हुई। इस संतान का नाम उन्होंने गोपाल रखा लेकिन कुछ समय पश्चात उस बच्चे की मृत्यु हो जाती है। हताश और निराश दंपति ने दूसरी संतान के जन्म और उसके जीवन की रक्षा के लिए उस समय के विख्यात सूफी-ख्वाजा जी जिन्हें 'मीर शाह' भी कहा जाता था, की शरण में जाकर मन्नत मांगी। शीघ्र ही समय आने पर उनके यहां एक पुत्री का जन्म हुआ। इसी पुत्री का नाम 'मीर शाह' के नाम पर मीरा रखा गया। बाल्यकाल में ही मीराबाई की माता का देहांत हो गया था। मीराबाई के दादा 'दूदाजी' ने बाल्यकाल से ही अपने पास बुला लिया। राजा रतन सिंह ने दूसरा विवाह नहीं किया और संवत 1584 वि• में वीरगति को प्राप्त हो गये।[2]

मीरा के दादा 'दूदाजी' वैष्णव के परम भक्त थे। इनकी असाधारण वीरता और अदभुत व्यक्तित्व के कारण समूचे राजपूताने में दूर-दूर तक इनका नाम तथा यश फैला। संभवत दादा के द्वारा ही बालिका मीरा के कोमल मन मस्तिक में कृष्ण भक्ति के अमिट संस्कारों की छाप पड़ी। मीरा का बचपन मेड़ता में ही व्यतीत हुआ। इस समय मीरा के शिशुमन पर दादा राव दूदाजी की जीवन पद्धति और मान्यताओं का गहरा प्रभाव रहा। राव दूदा वीर, स्वाभिमानी, उदार-ह्रदय, संत-सेवी, धार्मिक रुचि वाले कृष्ण भक्त थे। यहीं से मीराबाई के मानस पटल पर श्री कृष्ण की छवि अंकित हो गई। इसके अतिरिक्त मीरा में संगीत कला, काव्य प्रतिभा एवं कल्पना शीलता का अद्भुत समन्वय बचपन में ही पनपा।[3] दादा के साथ रहते वही मीरा के व्यक्तित्व में इन सभी गुणों का उत्तरोत्तर विकास होता चला गया। किशोरावस्था में मीरा - कृष्ण भक्ति में लीन, संतो के सत्संग में आनंदित रहती। समय के साथ कुछ महत्वपूर्ण घटनाओं ने परिस्थितियों को कुछ इस तरह पलटा कि उनके जीवन के अहम बिंदुओं में उनका वर्णन किया जाना उचित जान पड़ता है।

मीरा के बाल्यकाल में एक साधु-मंडली महल में आई, जिनके पास उनके आराध्य श्री गिरिधर जी की मूर्ति थी। जिसको देखकर मीराबाई इतनी प्रभावित हुई कि वह उनसे मूर्ति प्राप्त करने की हठ करने लगी, परंतु साधु-मंडली अपने आराध्य की मूर्ति को देने के लिए किसी प्रकार से भी तैयार नहीं हुईं। इस संपूर्ण घटना के बाद रात के समय साधु-मंडली को स्वपन में दिखाई दिया कि मीरांबाई के द्वारा मांगी गई उनके आराध्य की मूर्ति को उनके पास पहुंचाओं। इस घटना के बाद वहीं श्री कृष्णजी की मूर्ति मीरां जी के पास पहुंचा दी गई।

कुछ समय बाद एक अन्य घटना का वर्णन भी मिलता है। इस बारे में एक किंवदंती भी प्रचलित हुई कि एक बारात निकल रही थी, तब मीरां ने अपनी माता से इस बारे में काफी विचार-विमर्श किया और बाल्यमन की सभी जिज्ञासाओं को अपनी मां के सामने उत्सुकतावश पूछा। उस समय मीरां के मन की सभी बातों को उनकी माता वीरकुंवरि ने धैर्य से बालसुलभ मन के हर

सवाल, जिज्ञासा का यथोचित उत्तर दिया। इन सभी प्रश्नोत्तर में उन्होंने विवाह, पति-पत्नी के आपसी अटूट संबंध, प्रेम-भक्ति के बारे में सरल-सहज तरीके से समझाया और बताया कि यह सभी सबंध जन्म जन्मान्तरों के पवित्रता, आपसी प्रेम, समर्पण, भक्ति और त्याग पर आधारित है। इन्हीं सभी कौतूहलवश प्रश्न-उत्तर की श्रृंखला में अपने विवाह और वर के बारे में भी काफी चर्चा के पश्चात मीरा ने मां से पूछा कि मेरा विवाह किससे होगा तो उन्होंने अनजाने में ही सभी प्रश्नों को टालने के लिए श्रीहरि की मूर्ति की ओर संकेत कर दिया और तभी से ही बाल सुलभ मन में श्रीहरि को अपना पति स्वीकार कर लिया।

मीरा के एक पद में भी इस बात का दृष्टांत मिलता है कि वे अपनी मां से कहती है कि रात्रि स्वपन में उनका विवाह श्री गिरिधर से हो गया है। इस प्रकार श्री कृष्ण जी को स्मरण करते हुए ही मीरां बाल्यावस्था से युवावस्था में पहुंच गई।

विवाह, वैधव्य और मृत्यु

सामाजिक परंपराओं व संस्कारों में विवाह को भारतीय समाज में अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। अतः मीरां के जीवन काल में भी युवावस्था होते-होते यह समय आ पहुंचा। जब उनका विवाह संवत 1573 वि॰ में चित्तौड़ के राणा सांगा के राजकुमार भोजराज से हुआ। स्रोतों के अनुसार उस समय भोजराज की आयु मात्र 15 वर्ष की ही थी।[4] इसमें मीरा के जन्म वर्ष को विक्रमी संवत 1561 ईस्वी में स्वीकार किया है। अतः विवाह के समय वर-वधू की आयु लगभग 15 वर्ष और 12-13 वर्ष रही होगी। अतः अल्पायु में ही दोनों विवाह बंधन में बंद गए। मीरा विवाह उपरांत अपने आराध्य श्री हरि की मूर्ति भी अपने साथ ससुराल ले गई और अपने पति भोजराज को इस बात से परिचित करवाया की वह श्री कृष्ण की परिणीता है, तो विशाल मना भोजराज ने भी हंसकर स्वीकार कर लिया।

विवाह से पहले जब मीरां और कुंवर भोजराज की जन्मपत्रिका का मिलान किया गया तो उसमें दोष ही दोष पाए गए थे। हिंदू धार्मिक परंपराओं के अनुसार इस प्रकार के कुंडली मिलान में कम से कम 18 गुण अवश्य मिलने चाहिए अन्यथा संबंध को त्याज्य माना जाता है। मीरा और राजकुमार भोज में मात्र 4 गुण ही मिलते पाए गए। हिंदू साहित्य स्रोतों के अनुसार विवाह उपरांत मात्र 4 वर्ष में ही भोजराज मृत्यु को प्राप्त हो गए। स्रोतों के अनुसार पता चलता है कि इस समय सती प्रथा[5] का रिवाज भी हिंदू परंपरा में प्रचलित था। अतः मीरा पर भी दबाव डाला गया , लेकिन उन्होंने अपना समय भजन कीर्तन और भगवद सेवा में लीन रहकर बिताना स्वीकार किया। मीरा मृत्यु पर्यंत तक विभिन्न कठिनाइयों का सामना करते हुए भक्ति में लीन रही। इस समय मीराबाई ने उत्तर भारत में घूम घूम कर भक्तिभाव को जनमानस में फैलाया लेकिन महिला होने के कारण उन्होंने पुरुष प्रधान भारतीय समाज में अपनी विचारधारा के कारण अनेकों कष्ट झेलने पड़े। भक्ति के मार्ग पर चलते हुए उनके पारिवारिक सदस्यों ने भी उनके सामने अनेकों कष्ट उत्पन्न किए। जिनमें 'विष का प्याला, 'विषधर सर्प' आदि का उन्होंने हंसकर सामना किया। उन्होंने अपना संपूर्ण जीवन शाही ठाठ-बाठ को त्यागकर कर साधु-सन्यासी के रूप में बिता दिया। भक्ति मार्ग पर चलकर उन्होंने संत शिरोमणि गुरु रविदास जी को अपना गुरु स्वीकार किया। मीराबाई ने भक्ति मार्ग पर चलकर इतनी प्रसिद्धि प्राप्त की कि तत्कालीन महान मुगल सम्राट अकबर भी उनके दर्शन किए बगैर नहीं रह सके। जीवन के अंतिम समय में वे द्वारिका जाकर रहने लगी। जहां संवत 1603 वि॰ में श्री हरि के चरणों में लीन हो गई।[6] ये संपूर्ण जानकारी ऐतिहासिक खोजों के आधार पर वर्णित है।

भगवद-भक्तों दवारा मीराबाई का उल्लेख

भक्ति संप्रदाय के समकालीन और परवर्ती भक्तों का दृष्टिकोण भी जानना अति आवश्यक है। इस प्रकार के विवरणों में मीराबाई के जन्म-मरण के बारे में बेशक पता ना चले लेकिन ऐसा स्वरूप जो भक्ति विचारधारा को उजागर करने वाला है, अवश्य ज्ञात होता है।

श्री हरिराम व्यास, जो सं॰ 1612 वि. में 45 वर्ष की अवस्था में श्री हित हरिवंशजी के शिष्य हुए जो उनके समकालीन थे। उन्होंने मीराबाई को भक्तों के कुटुंब में प्रमुख स्थान ही नहीं दिया है बल्कि उन्होंने मीरां के लिए भक्तों में पिता तुल्य भावना का वर्णन भी किया। इसी प्रकार नानादास कृत 'भक्तमाल' (संवत 1640 वि॰) में लिखा है कि कलियुग में मीरांबाई ने द्वापर युग की गोपिका सदृश्य कृष्ण से प्रेम किया। दुष्टों ने उनके प्राण हरने के लिए उनको विष दिया, किंतु उनकी श्रीहरि के प्रति अपार श्रद्धा के कारण विष अमृत के स्वरूप में परिवर्तित हो गया। इसी 'भक्तमाल' पर टीका करते हुए प्रियादास ने अपनी 'भक्ति रस-बोधिनी' नामक टीका में (संवत 1769 वि॰) मीराबाई का वर्णन करते हुए गिरधर लाल से प्रेम, राणा से विवाह, विदा होते समय मूर्ति को अपने मां से मांग ले जाने का उल्लेख करते हुए लिखा है कि ससुराल पहुंचने पर सास ने उनसे देवी पूजन के लिए कहा किंतु मीराबाई के अस्वीकार करने पर वह उनसे रूष्ट हो गई। इतना ही नहीं, उन्होंने इस बात की शिकायत राणा से भी की और वह उन्हें मारने को भी तैयार हो गए। ननंद ने भी समझाया लेकिन वे नहीं मानी। राणा ने विष भेजा। मीरा उसे भी पी गई, परंतु इससे उनकी मृत्यु नहीं हुई। किसी ने राणा से चुगली की कि मीराबाई रात्रि में किसी पर-पुरुष से बातचीत करती है। राणा ने उनके पीछे गुप्तचर लगाए और उन्होंने गिरधरलाल से बातचीत करते देख इसकी खबर राणा को दी। इतना सुनकर राणा मारने गए और उन्होंने मीराबाई से पूछा कि किस से बातचीत कर रही थी कर रही थी, तो उन्होंने बता दिया कि वे गिरधर गोपाल से बातचीत कर रही थी।

इस प्रसंग में आगे लिखा है कि अकबर मीराबाई के सौंदर्य का हाल सुनकर तानसेन के साथ उन्हें देखने आया और देखकर अति प्रसन्न हुआ। इस घटना के अतिरिक्त भी अनेकों ऐसी घटनाएं घटित हुई जो साहित्य में दर्ज हुई लेकिन कृष्ण की प्रियसी मीरा के जीवन में एक के बाद एक अनेकों वर्णन हमें मिलते हैं। इसी प्रकार कि एक घटना में वृंदावन यात्रा में जीव गोस्वामी कि स्त्री-मुख न देखने की प्रतिज्ञा छुडाई। यहां से वे द्वारिका जाकर रहने लगी और राजा के बुलाने पर वे श्री रणछोड़ जी में लीन हो गई।

वर्तमान में प्रासंगिकता

शोध सार कि वर्तमान में प्रासंगिकता कई मायनों में लाभदायी साबित होती है। सामाजिक समरसता को बनाए रखने में अत्यंत सटीक है। स्त्री विमर्श में भक्ति मार्ग पर चलने वाली प्रथम भारतीय महिला जो भारतीय साहित्य में सबसे ज्यादा प्रभावशाली व्यक्तित्व है। भक्ति मार्ग पर चलते हुए विभिन्न विपरीत परिस्थितियों से भी विचलित न होते हुए अपने मार्ग पर अग्रसर रही। इसके अतिरिक्त मीराबाई उच्च कुल कि नारी होते हुए भी अपने गुरु संत रविदास जी से ज्ञान कि लौ को अपने ह्रदय में प्रकाशित करते हुए गुरू और गुरुभक्ति कि अमिट छाप इतिहास में दर्ज करवाती रही। साथ-साथ समाज में विधवाओं कि दशा, भक्ति दर्शन व सामंजस्य कि स्थिती को बनाकर समाज की विभिन्न कुरीतियों को समाप्त कर समाज को एक नई दिशा दिखाई जा सकती है।

उपसंहार

इस प्रकार सगुण भक्ति धारा के कृष्ण भक्तों में मीराबाई का स्थान सर्वोत्तम माना जा सकता है। उनके माता-पिता ने उनका लौकिक विवाह भी

किया लेकिन वे कृष्ण को ईश्वर स्वरुप ही नहीं अपितु अपने पति तुल्य भी मानती थी। उन्होंने पारलौकिक प्रेम को स्वीकार कर घर-बार सब कुछ त्याग कर जोगन बनकर यश कमाया। मीरांबाई ने गली-गली अपने इष्ट, अपने आराध्य, श्रीकृष्ण को ढूंढा। उन्होंने वृंदावन की गली-गली,घर-घर, बाग-बाग और पत्तों पत्तों में अपने गिरधर गोपाल को ढूंढा अंत में जब वे नहीं मिले तो वे द्वारिका चली गई।

मीरा बाई ने अनेक लोकप्रिय पदों की रचना की हालांकि काव्य रचना उनका उद्देश्य नहीं था लेकिन अपने आराध्य के प्रति निकले उनके शब्द ही भजन बनकर लोगों की जुबान पर चढ़ गई उनके यही भजन व पद राजस्थान, गुजरात, उत्तर प्रदेश, बंगाल आदि जगहों पर लोकप्रिय हुए और आज भी वह रेडियो, टेलीविजन, यूट्यूब चैनल, घर यातायात के साधनों, मंदिरों, सामूहिक व एकांत प्रिय स्थलों पर बजते सुने जा सकते हैं। प्रेम भक्ति में मग्न होकर गाए गए उनके पद व गीत यत्र तत्र बिखरे पड़े हैं।

इस प्रकार शोध सार से प्रतीत होता है कि वास्तव में ही मीराबाई ने बचपन से ही जिस कृष्ण से लौ लगाई तो फिर और किसी की नहीं हो पाई। सामाजिकता के दबाव में परिवार के कहने पर विवाह तो कर लिया किंतु पति तो केवल कृष्ण ही रहें। कृष्ण को मीरां ने सपने में ही अपना वर चुन लिया था। एक प्रकार से स्वयंवर किया था, जो भारतीय विवाह परंपराओं में से एक हैं और मान्य भी। इस बारे में मीरा का एक पद है जिसमें वे कहती है कि---

"माई म्हांने सुपने में वरी गोपाल।
राती पीती चुनरी ओढ़ी, मेहंदी हाथ रसाल।।[7]

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि मीरां एक क्रांतिचेता नारी हुई है। भारतीय समाज और संत परंपरा में उनका स्थान सम्मानीय रहेगा। वर्तमान में चल रहे नारी विमर्श के दौर में मीरां का पात्र भारतीय इतिहास दर्शन में अत्यंत अविस्मरणीय रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सं• सुदर्शन चोपड़ा, मीरा (2002) पेज नं 10, हिंदी पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली 10003.
2. सं• नीलोत्पल(2011) मीरा पदावली, पृ.10, ग्रंथ अकादमी, पुराना दरियागंज, नई दिल्ली-110002.
3. विवेक भसीन (2014) कृष्ण की मीरा, पेज नं 12, इंडिया बुक कंपनी, उत्तम नगर, नई दिल्ली-1100 59.
4. विवेक भसीन, मीरां, पेज नं 16, इंडिया बुक कंपनी।
5. सं• नीलोत्पल, मीरा पदावली, पृष्ठ- 11.
6. वही•
7. वहीं •